''स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत नाटकों में व्यंग्य''
(1980 ई॰ से वर्तमान तक)

दयालबाग शिक्षण संस्थान (डीम्ड विश्वविद्यालय)
दयालबाग आगरा, की संस्कृत विषय में पी–एच.डी.
उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध की प्रस्तावित

रूपरेखा
2014

निर्देशिका

डॉ. निषीथ गौड़
असिस्टेंट प्रोफेसर
संस्कृत विभाग, कला संकाय,
दयालबाग़, आगरा

शोधार्थी

गौरव गौतम
एम.ए. आचार्य
बी.एड.

विभागाध्यक्षा

प्रो. उर्मिला आनन्द
संस्कृत विभाग : कला संकाय

दयालबाग़ शिक्षण संस्थान (डीम्ड विश्वविद्यालय)
दयालबाग़, आगरा

शोध का उद्देश्य

'व्यंग्य' संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार हैः वि+अंग= व्यंग, जिसका अर्थ है विकृत, विरूप या विकलांग अर्थात् विकृति या विरूपण व्यंग्य का कारक तत्त्व है। शब्द–कल्पद्रुम में भी व्यंग को इसी रूप में समझाया गया है, 'विकृतानि अंगानि यस्मात्।' इसमें 'ण्यत्' प्रत्यय लगने से व्यंग्य बनता है। इस प्रकार जो विकलांगता को उजागर करे, वह व्यंग्य है।

संस्कृत साहित्य में व्यंग्य का प्रयोग अवश्य मिलता है किन्तु वह आधुनिक 'व्यंग्य' के अर्थ में नहीं। उसका प्रयोग समूचे काव्यशास्त्रीय अध्ययन के परिप्रेक्ष्य में 'व्यंग्यार्थ' के रूप में मिलता है। 'साहित्यदर्पणकार' के अनुसार अर्थ तीन प्रकार का होता है– वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ। वाच्यार्थ वह है जो अभिधाशक्ति द्वारा प्रतिपादित किया जाता है, लक्ष्यार्थ वह है जो लक्षणा शक्ति द्वारा बोधित होता है और व्यंग्य अर्थ उसे कहते हैं जो व्यञ्जना–शक्ति द्वारा अवगत किया जाता है इस प्रकार शब्द–शक्तियाँ तीन हुआ करती हैं।

साहित्यदर्पणकार ने व्यञ्जना शक्ति को स्पष्ट करते हुए कहा है कि व्यञ्जना शक्ति शब्द और अर्थ की वह आदि शक्ति है, जो अभिधा आदि शक्तियों के शान्त हो जाने पर एक ऐसे अर्थ का अवबोधन कराती हैं जो (वाच्य लक्ष्यादि रूप अर्थों से) सर्वथा एक विलक्षण प्रकार का अर्थ हुआ करता है। इसके तीन रूप माने गये हैं–अभिधामूलक, लक्षणामूलक और आर्थी व्यञ्जना इनमें से अभिधा मूलक व्यञ्जना वह शक्ति है, जिसके द्वारा शब्द का एक अन्य ही अर्थ निकला करता है, उस शब्द की अभिधा किसी न किसी अभिधा–नियामक तत्त्व द्वारा किसी एक अर्थ में नियंत्रित कर दी गई होती है।

लक्षणा मूलक व्यञ्जना जो अन्वय की अनुपपत्ति के कारण प्रवृत्त होती है, उतने ही अर्थ को अपना विषय बना सकती है जो अन्वय की अनुपपत्ति दूर करे। काव्य

प्रकाश के अनुसार ऐसा भला कैसे हो सकता है कि लक्षणा द्वारा वह अर्थ भी प्रतीत हुआ करे जिसमें अन्वय की कोई उपपादकता नहीं। 'गंगायाम् घोषः' आदि प्रयोगों में लक्षणा द्वारा तट रूप अर्थ ही प्रतिपादित हो सकता है क्योंकि इसी अर्थ में अन्वय की स्वभावतः उत्पत्ति हो जाती है। शैत्यादि रूप अर्थ का प्रतिपादन लक्षणा द्वारा कैसे हो, इस अर्थ में अन्वय की क्या उपपादकता? साहित्यदर्पणकार ने शब्दों में आर्थी व्यञ्जना का रूप स्पष्ट करते हुए कहा है कि ''अर्थसम्भवा'' अर्थात् आर्थी व्यञ्जना वह व्यञ्जना है जो कतिपय कारणों से अन्य ही अर्थ का प्रत्यायन कराती है। ये कारण हैं– वक्तृ–वैशिष्ट्य बौद्धव्य–वैशिष्टय वाक्य–वैशिष्ट्य, अन्यसन्निधि–वैशिष्ट्य, वाच्य–वैशिष्ट्य, प्रस्ताव वैशिष्ट्य, देश–वैशिष्ट्य, काल–वैशिष्ट्य, काकु–वैशिष्ट्य, चेष्टा वैशिष्ट्य, अन्यान्य वैशिष्ट्य।

इस प्रकार समूचे परम्परागत संस्कृत साहित्य में समाहित काव्य–शक्तियों की त्रयी में से 'व्यंग्यार्थ' तथा वक्रोक्ति के विवेचन में ही व्यंग्य की सत्ता के अस्तित्त्व की यत्किञ्चित स्थिति स्वीकार की जा सकती है। ये उस परिवेश में गृहीत नहीं, जिस पर व्यंग्य का आधुनिक स्वरूप अवस्थित है। आधुनिक व्यंग्य लेखन इनकी परिधि से बाहर है, उसमें संस्कृत की 'व्यञ्जना' के साथ अंग्रेजी 'सटायर' का अर्थ एवं उद्देश्य समाविष्ट है। आज का व्यंग्य पारम्परिक चुहल अथवा परिहास मात्र न होकर एक गम्भीर और साहित्यिक कर्म है। वह एक व्यापक अर्थ–बोध लिए है। समाज के विकृत एवं गलित अंगों पर प्रहार कर उनके प्रति पाठक एवं श्रोता को सचेत करना उसका मूलभूत प्रयोजन है इसीलिए वह एक प्रहारात्मक त्वरा से युक्त है और एक गहराई लिए है। फलतः वह संस्कृत की 'व्यञ्जना' से निसृत हो कर भी उसके इतना निकट नहीं जितना कि अंग्रेजी के 'सटायर' के है। मानविकी पारिभाषिक कोश में 'सटायर' का 'व्यंग्य' अर्थ देते हुए कहा गया है 'उसका लक्ष्य मानवीय दुर्बलताओं पर प्रहार करके उन्हें उभारना और सुधारना होता है।' प्रकारान्तर से कहा जा सकता है कि संस्कृत का 'व्यंग्य' ही अपनी व्यापकता में 'सटायर' का पर्याय धारण किए है।

नाटक मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति का एक सशक्त साधन है। सम्वाद परस्पर विचारों के आदान–प्रदान का हेतुभूत वाग्व्यवहार है जो सामान्य व्यक्ति से लेकर विशेष जन के मध्य निरन्तर गतिशील रहता है। यह मनुष्य की चेष्टा, वृत्ति, प्रवृत्ति, कृत्य और उनके मनोभावों को भी व्यक्त करता है जो शिशु के तोतले शब्दों से प्रारम्भ होकर मरणशील मनुष्य के अन्तिम शब्द तक जारी रहता है।

भारतीय परम्परा में इसीलिए नाटकों का पूर्व रूप वेदों में उपलब्ध सम्वाद सूक्तों को माना जाता है। नाटकों की सम्वाद शैली की जीवन्तता भावों के प्रदर्शन की सशक्तता तथा अभिनेय दृश्यों के सजीव प्रस्तुतीकरण की कला के कारण ही कहा गया है–

''काव्येषु नाटकं रम्यम्''

मूलतः काव्य के दो रूप हैं– श्रव्य काव्य और दृश्य काव्य। दृश्य काव्य को ही 'रूपक' भी कहा गया है– **'तदरूपारोपात्तु रूपकम्' (साहित्य दर्पण– 4–6–1)**। रूपक के दश भेद हैं–

'नाटकं प्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः।
व्यायोगसमवकारौ वीथ्यंकेहामृगा इति।।

दशरूपकम् 1/8

नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग, समवकार, वीथि, अंक, ईहामृग।

'नाटक' को ही इन सबसे सर्वश्रेष्ठ माना गया है क्योंकि इसी में नाटक–सम्बन्धी सभी तत्त्वों अथवा अंगों का समावेश हो जाता है। भरत मुनि के अनुसार नाट्य में समस्त–शास्त्रों तथा कलाओं का समावेश हो जाता है। उनका कथन है कि कोई भी ज्ञान, शिल्प, विद्या, योग अथवा कर्म इस प्रकार का नहीं कि जिसका दर्शन नाट्य में न होता हो–

न तज्जानं न तच्छिल्पं नसा विद्या न सा कला।

नसौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन्न दृश्यते।।

नाट्यशास्त्र 1/117–118

अतः सभी प्रकार के काव्यों में नाटक सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया जाना उचित है।

आचार्य वामन ने भी कहा है– संदर्भों में दशरूपक (नाटक इत्यादि) श्रेष्ठ है क्योंकि सभी गुणों से परिपूर्ण होने से वहाँ नाटक चित्रपट के समान विचित्र रूप वाला है।

संस्कृत नाट्य कोष– डॉ. रामसागर त्रिपाठी

नाटकीय कला का युग है। साहित्य की सभी विधाओं में सम्वाद शैली को कहीं न कहीं कुछ न कुछ स्थान अवश्य दिया जाता है कहानी हो या उपन्यास उसमें प्राप्त सम्वाद विषय को शक्ति प्रदान कर देता है। चलचित्र एवं दूरदर्शन में तो सम्वाद शैली सर्वत्र नाटकीय शैली को ही प्रदर्शित करती है। अतः नाटक ही इस युग का प्रभावी ज्ञान विज्ञान एवं मनोरंजन का माध्यम है।

देखने को मिलता है कि संस्कृत में हास्य पर अधिक कार्य हुआ। ''व्यंग्य'' शोध का मुख्य विषय नहीं बन सका। बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में कुछ शोध कार्य हुए हैं जैसे– डॉ० गोविन्द केशव भट्ट के मूल अंग्रेजी शोध प्रबन्ध ''विदूषक'' का हिन्दी अनुवाद डॉ. चन्दूलाल दुबे ने 1970 में प्रस्तुत किया। इस महत्त्वपूर्ण शोध कृति में भारतीय नाट्यशास्त्री की विनोदविषयक धारणा विदूषक के स्वरूप और संस्कृत नाटक की विदूषक परम्परा का गवेषणात्मक निर्देश किया गया है। ''संस्कृत साहित्य में हास्यरस'' विषय पर डॉ. कमलाकान्त शुक्ल (वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय, 1969) ने शोध कार्य किया है। इन दोनों शोध प्रबन्ध में व्यंग्य को अपेक्षित छोड़ दिया है। ''संस्कृत में हास्यपरक साहित्य'' विषय पर (आगरा विश्वविद्यालय) ''संस्कृत काव्य तथा नाटक में हास्य'' (मेरठ विश्वविद्यालय) ''भारत के नाटकों में हास्य एवं व्यंग्य'' (रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय) कार्य हुए। डॉ. श्रीराम ठाकुर का ''स्वातन्त्रयोत्तर संस्कृत काव्य में हास्यव्यंग्य'' शोध प्रबन्ध जोकि 15 अगस्त 1947 से सन् 1991) तक संस्कृत में

रचित हास्य व्यंग्य काव्य के गवेषणात्मक अध्ययन पर आधारित है। इनके बाद संस्कृत नाटक, या काव्य में शोधार्थी की दृष्टि में कार्य नहीं हो रहा है।

अतः **''स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत नाटकों में व्यंग्य''** पर कोई शोध कार्य न होने से मैंने विषय का चयन किया।

''स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत नाटकों में व्यंग्य'' इस शोध कार्य में नाटकों का विवेचनात्मक एवं गवेषणात्मक अध्ययन किया जायेगा और निगमन प्रणाली का प्रयोग किया जायेगा।

शोधार्थी

गौरव गौतम

शोध कार्य की प्रस्तावित रूपरेखा
"स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत नाटकों में व्यंग्य"
(1980 से वर्तमान तक)

प्रथम अध्याय– नाटकों का उद्‌भव एवं विकास

(क) आधुनिक संस्कृत नाटक–स्वरूप एवं परम्परा

(ख) अध्येय संस्कृत नाटक नाट्यशास्त्रीय तत्त्वों के परिप्रेक्ष्य में

द्वितीय अध्याय– व्यंग्य–परिभाषा एवं स्वरूप

(क) भारतीय दृष्टिकोण

(ख) पाश्चात्य दृष्टिकोण

तृतीय अध्याय– अध्येय नाटकों में सामाजिक व्यंग्य

(क) सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य

(अ) जाति प्रथा (ब) दहेज प्रथा (स) कन्या भ्रूण हत्या

(ख) पारिवारिक सम्बन्धों पर व्यंग्य

(ग) नारी की स्थिति पर

चतुर्थ अध्याय– अध्येय नाटकों में राजनीतिक व्यंग्य

(क) वर्तमान राजनीति

(अ) परिवारवाद (ब) राजनीतिक तुष्टीकरण (स) सत्ता लोलुपता

(ख) भ्रष्टाचार

पंचम अध्याय– अध्येय नाटकों में आधुनिक षिक्षा प्रणाली पर व्यंग्य

(क) वर्तमान शिक्षा प्रणाली

(अ) अनुशासनहीनता (ब) शिक्षित बेरोजगार

(ख) शिक्षक एवं शिक्षार्थी

षष्ठ अध्याय– अध्येय नाटकों में व्यंग्यपरक भाषा शैली

(क) भाषा

(ख) शैली

उपसंहार– अध्ययन का निष्कर्ष

आधार ग्रन्थ सूची

	ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशन	संस्करण
1.	शम्बूकाभिषेकम्,	रामजी उपाध्याय,	भारतीय संस्कृति संस्थान–महामनापुरी वाराणसी–5	
2.	सीताभ्युदयम्	रामजी उपाध्याय,	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी	
3.	रूपक पञ्चकम्	डॉ. बलभद्र प्रसाद शास्त्री	वाग् देवता प्रकाशन, बरेली	प्र.–2002
4.	सैरन्ध्री नाटकम्,	डॉ. बलभद्र प्रसाद शास्त्री	वाग देवता प्रकाशन, बरेली	प्र.–2005
5.	गुरु दक्षिणा नाटकम्	गौरीनाथ मिश्र	भारतीय विद्या प्रकाषन, दिल्ली,	प्र.–1990
6.	आष्वासनम् नाटकम्	डॉ. ओमप्रकाष शास्त्री	श्रुत प्रकाषन, लखनऊ,	प्र.–1993
7.	जीवन पर्व	ओमप्रकाष पाण्डेय	पेन मैन पब्लिषर्स, दिल्ली,	प्र.–1998
8.	कर्णाभिजात्यम्	डॉ. बलभद्र प्रसाद शास्त्री	वाग् देवता प्रकाशन, बरेली	प्र.–1989

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.	दशरूपकम्	डॉ. भोला शंकर व्यास	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी–1	1955
2.	स्वातन्त्रयोत्तर संस्कृत काव्य में हास्य–व्यंग्य	श्री राम ठाकुर 'दादा'	प्रतिभा प्रकाशन, 29/5 शक्ति नगर दिल्ली	प्रथम 1999
3.	नरेन्द्र कोहलीः विचार और व्यंग्य	सुरेश कान्त	वाणी प्रकाशन, 21–ए दरियागंज, नई दिल्ली	प्रथम 2000
4.	'चौखम्बा संस्कृत प्रकाश' यू.जी.सी. नेट/स्लेट, संस्कृत तृतीय प्रश्न–पत्र 'अ'	गिरिधर गोपाल शर्मा अंजना शर्मा	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी	2008
5.	नाट्यशास्त्र	बाबूलाल शुक्ल शास्त्री	चौखम्बा	सं० 2029
6.	साहित्य दर्पण	डॉ. सत्यव्रत सिंह	चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी	तृ० 1960

सहायक–ग्रन्थ सूची

1.	काव्य प्रकाश	डॉ. पारस नाथ द्विवेदी	विनोद पुस्तक मन्दिर	1986
2.	नाट्य दर्पणम्	पं. थानेश चन्द्र उप्रैती	परिमल पब्लिकेशन	द्वि० 1994

3.	रस कल्पद्रुम	डॉ. भास्कर मिश्र	ईस्टर्न बुक लिंकर्स	द्वि० 1991
4.	वक्रोक्ति अलंकार	डॉ. मथुरेश नन्दन कुलश्रेष्ठ	ब्रज किशोर कुलश्रेष्ठ प्रकाशन जयपुर	
5.	संस्कृत नाट्य सिद्धान्त	डॉ. रमाकान्त त्रिपाठी	चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी	प्र.सं 1969
6.	संस्कृत नाटिकाओं का नाट्यषास्त्रीय अध्ययन	डॉ. प्रमिला	संजय प्रकाषन, दिल्ली	प्र.सं.2006

कोश ग्रन्थ

1.	संस्कृत नाट्य कोश	डॉ. राम सागर त्रिपाठी	चौखम्बा संस्कृत प्रकाशन, 38, यू.ए. जवाहर नगर, बंगलो रोड, नई दिल्ली	प्रथम
2.	शब्द कल्पद्रुम,चतुर्थ भाग	श्री वरदा प्रसाद वसुना श्री हरिचरण वसुना	चौखम्बा संस्कृत ग्रन्थमाला	तृतीय वि.सं. –2024
3.	भाषा शब्द कोष	रामचन्द्र शुक्ल (रसाल)	रामनारायण लाल, बेनी प्रसाद, इलाहाबाद–2	पंचम 1961